

आहार एवं पोषण की परम्परागत भारतीय दृष्टि

डॉ. धनंजय मणि त्रिपाठी

संस्कृत विभाग, जामिया मिल्लिया इस्लामिया (केन्द्रीय विश्वविद्यालय), नई दिल्ली 110025

ई-मेल: dttripathi@jmi.ac.in मो. 9799202177

सार -

वर्तमान समय में जब मानव जीवन भागदौड़, तनाव, प्रदूषण और अनियमित जीवनशैली से प्रभावित है, ऐसे में सात्विक भोजन का महत्व और अधिक बढ़ गया है। आज के समय में लोग जहाँ मोटापा, मधुमेह, उच्च रक्तचाप जैसी बीमारियों से ग्रसित हो रहे हैं, ऐसे में सात्विक आहार एक प्राकृतिक औषधि की तरह कार्य करता है। यह भोजन शरीर को हल्का और ऊर्जावान बनाता है तथा रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है। सात्विक भोजन न केवल शरीर को स्वस्थ रखने में सहायक होता है, बल्कि मन को भी शांति प्रदान करता है। श्रीमद्भगवद्गीता जीवन के तीन गुणों सत्त्व, रज, तम के आधार पर आहार की शुद्धता का गूढ़ ज्ञान देती है। सात्विक आहार को आत्मिक उन्नति, मानसिक शांति और स्वास्थ्य का स्रोत बताकर वह जीवन के संतुलन की राह दिखाती है।

कूट-शब्द -सात्विक आहार, तामसिक आहार, राजसिक आहार, यौगिक आहार।

आहार एवं पोषण विज्ञान वर्तमान परिपेक्ष्य में एक महत्वपूर्ण विषय है। वैज्ञानिकों ने इस क्षेत्र में कई महत्वपूर्ण अन्वेषण किये हैं। पूर्व स्थापित तथ्यों के दृष्टिगत आहार विशेषज्ञ नवीन प्रश्नों एवं समस्याओं के हल शोध के माध्यम से खोजने में प्रयासरत हैं। स्वास्थ्य संरक्षण के लिये मनुष्य को वही शुद्ध आहार करना चाहिये जो जीवन्तता, ऊर्जा, स्वास्थ्य एवं प्रसन्नता में वृद्धि करे, जो स्वादिष्ट, सम्पूर्ण पुष्टिवर्धक और स्वीकार्य हो। परन्तु स्वार्थ के वशीभूत होकर हम कभी-कभी हानिकारक वस्तुएं खाते हुए भी संकोच नहीं करते और भूख एवं आवश्यकता से अधिक भोजन कर लेते हैं। जीभ के स्वादवश अधिक आहार भी हो जाता है तो कभी अति व्यस्तता के कारण भोजन छूट जाता है। अधिक खाना और न खाना दोनों ही स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं। आचार्य चरक ने अपनी चरकसंहिता में कहा है कि स्वास्थ्य संरक्षण के तीन प्रमुख आधार हैं। आहार, निद्रा और ब्रह्मचर्य। इन्हीं के आधार पर स्वास्थ्य आधारित है-त्रयोपस्तम्भाः आहारनिद्राब्रह्मचर्यमिति।¹ अतः प्रत्येक स्वास्थ्य प्रेमी एवं सजग व्यक्ति को भोजन कब, क्यों, कितना, कहाँ, और कैसे करना चाहिये इस दृष्टिकोण से भगवान् श्रीकृष्ण द्वारा निर्देशित दैवीय सिद्धान्तों को अपने जीवन में संचारित करना अपरिहार्य है। जो व्यक्ति

भगवान् श्रीकृष्ण के वचनानुसार को जीवन का आधार बना लेता है उसके अस्तित्व में अनन्त चेतना का प्रकाश होता है। वास्तव में देखा जाये तो प्रत्येक प्राणी को जीवन के निर्बाध संचार हेतु आहार करना होता है। किन्तु मनुष्य का आहार प्राण-अस्तित्व के साथ ही उसके मन से भी सम्बन्धित होता है। एक कहावत भी है जैसा खाये अन्न वैसा होवे मन। छान्दोग्योपनिषद् में भी यह बात स्पष्टरूप से कही गयी है- **अन्नमयं हि सोम्य मनः।**² यह बात बिल्कुल सत्य है कि मन पर खाद्य का प्रभाव बहुत अधिक पड़ता है। यदि हमारा भोजन शुद्ध एवं सात्विक होगा तो हमारा मन भी सात्विक विचारों से युक्त होगा। कहा भी गया है- **आहार शुद्धौ सत्त्वशुद्धिः।**³ मनुष्य जैसा आहार करता है वैसा ही उसका अन्तःकरण हो जाता है। अन्तःकरण के अनुरूप ही उसकी रुचि होती है-

सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारता।⁴

अतः गीता में जहाँ-जहाँ आहार की बात आई है, वहाँ-वहाँ भगवान् ने आहारी का वर्णन किया है जैसे **नियताहाराः**⁵, नियमित आहार करने वाले का, **नात्यश्नतस्तु योगोऽस्ति न चैकान्तमनश्नतः**⁶ अधिक खाने वाले और बिल्कुल न खाने वाले का, **युक्ताविहारस्य**⁷ नियमित खाने वाले का, **यदश्नासि**⁸ भोजन के पदार्थ को भगवान् को अर्पण करने वाले का और **लघ्वाशी**⁹ अल्प भोजन करने वाले का वर्णन किया गया है। पौष्टिकता के नाम पर अत्यधिक मात्र में तामसिक अथवा राजसिक आहार वाले भोजन का सेवन उचित नहीं है इससे शरीर के पाचन व चयापचन संस्थान पर अनावश्यक भार पड़ता है। चरक संहिता में भी कहा गया है कि -**आहार सम्भवं वस्तु रोगाच्चहारसम्भवाः।**¹⁰

श्रीमद्भगवद्गीता के 17 वे अध्याय में आहारी के आहार की रुचि का वर्णन आया है। जिसमें भगवान् यह बताते हैं कि मनुष्यों को अपनी रुचि के अनुसार तीन प्रकार का भोजन प्रिय होता है-

आहारस्त्वपि सर्वस्य त्रिविधो भवति प्रियः।¹¹

पहला सात्विक (ज्ञान, सुख और शान्ति सत्त्वगुण से उत्पन्न होता है), दूसरा राजसिक (लोभ, आसक्ति कामना आदि राजस भाव के प्रति रजोगुण से) और तीसरा तामसिक (तमोगुण से प्रमाद, मोह, अज्ञानादि उत्पन्न होते हैं)¹²।

सात्विक आहार-

आयुः सत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः।

रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः सात्विकप्रियाः॥¹³

जो खाद्य वस्तुएँ आयु, बल, बुद्धि, आरोग्य, सुख और प्रीति की वृद्धि करती हैं तथा जो स्वादिष्ट, रसीली एवं मन पसन्द होती हैं वही सात्विक लोगों को प्रिय होती हैं। सात्विक आहार के अन्तर्गत दूध, घी, शाक, फल, चीनी, गेहूँ, चना, मूँग तथा चावल आते हैं। इनका सार बहुत दिन तक शरीर में शान्ति देता है। अध्यात्मिक दृष्टि से देखें तो अन्न, दूध, फल, पत्तेदार सब्जियों का सादा भोजन आध्यात्मिक उन्नति में सहायक होता है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखें तो सात्विक आहार में विटामिन, खनिज लवण, कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीनादि पर्याप्त मात्रा में होते हैं। तन्तु वाले सभी भोज्य पदार्थ भी इसके अन्तर्गत आ जाते हैं। ऐसे भोजन सुपाच्य होने के कारण हमारे गुर्दे और हृदय पर अतिरिक्त बोझ नहीं डालते और हम अधिक उर्जा की अनुभूति करते हैं।

राजसिक आहार -

कट्वम्ललवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः ।

आहारा राजसस्येष्टा दुःखशोकामयप्रदाः ॥¹⁴

अधिक कड़वे, अधिक खट्टे, अधिक नमक वाले पदार्थ, अति गर्म, अति तीखे, अति रूखे, दाहधारक भोज्यपदार्थ जो चिन्ता तथा रोगों को उत्पन्न करने वाले होते हैं। ऐसे आहार राजस पुरुष को प्रिय होते हैं। वर्तमान में देखें तो पिज्जा, मैगी, बर्गर, पैस्ट्री, तथा अधिक मिर्च-मसाले वाले भोज्य पदार्थों की ओर लोगों की रुचि बढ़ गई है। अधिक घी, तेल, मिर्च, मसाले वाले पदार्थ गरिष्ठ होते हैं। यदि इन्हें अधिक मात्रा में खाया जाये तो अपच के कारण रस एवं रक्त दूषित और अशुद्ध होते हैं। ऐसे भोज्य पदार्थों में कॉलस्ट्रॉल की मात्रा अधिक होती है। जिससे मोटापे के साथ-साथ हृदयरोग बढ़ते हैं।

तामसिक आहार -

यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत्।

उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियम्॥¹⁵

जो भोजन अधपका, रसरहित, दुर्गन्धयुक्त, बासी और उच्छिष्ट एवं अपवित्र होते हैं। वह भोजन तामस पुरुष को प्रिय होते हैं। ऐसा भोजन करने से आलस्य, निष्क्रियता एवं मन निश्चेष्ट होता है। अधपका भोजन जो सही से पका न हो वह इस श्रेणी में आता है। आजकल लोग घरों में सूक्ष्म तरंगी का प्रयोग करने लगे हैं जिससे भोजन जल्दी तैयार तो हो जाता है, परन्तु वह पूर्ण रूप से पका हुआ नहीं होता। इससे निकलने वाली विद्युत चुम्बकीय वर्णक्रम (Electromagnetic spectrum) से भोजन के पौष्टिक

तत्त्व नष्ट हो जाते हैं। रसरहित भोजन अर्थात् धूप या मशीन से जिसका रस निकाला गया हो वह भी इसी श्रेणी में माना जाता है। पहले हम मौसम के अनुसार फलों का रस पिया करते थे। परन्तु आज विभिन्न प्रकार के कीटनाशक तत्वों को डालकर फलों का रस मशीनों से निकाल कर, उसे डिब्बे में बन्दकर हम महीनों बाद तक पीते रहते हैं। जो हमारे स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होते हैं।

प्रायः दुर्गन्धयुक्त भोजन में प्याज, लहसुन को माना जाता है। ऐसे तो प्याज और लहसुन शरीर के लिये कितने भी लाभकारी, गुणकारी क्यों न हों किन्तु मानसिक और आध्यात्मिक रूप से ये तामसिक भोजन के अन्तर्गत माने जाते हैं। वहीं अपवित्र भोजन में मांस, मछली, अण्डा, अफीम, तम्बाकू, बीड़ी, सिगरेट, गांजा, भांग, अपवित्र दवाईयां इत्यादि तमोगुण उत्पन्न करने वाली हैं। मांस, मछली, अण्डादि सुपाच्य भोजन नहीं है। वहीं मदिरा, भांग, गांजा इत्यादि से बुद्धि का क्षय होने के अतिरिक्त, हृदयादि पर प्रभाव पड़ता है। तम्बाकू, बीड़ी, सिगरेट, आदि का सेवन करने से फेफड़े में कैंसर, हृदय की बीमारियां, आंत में अल्सर जैसी बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं। तामसिक भोजन से शारीरिक, मानसिक आध्यात्मिक तथा आत्मिक विकार उत्पन्न होते हैं।

यौगिक आहार-

मानसिक उत्कृष्टता एवं शारीरिक स्वास्थ्य प्राप्त करने हेतु शास्त्रों में ध्यानयोग का अभ्यास जितना महत्वपूर्ण बताया गया है वह आज भी महत्वपूर्ण है। योगी को अपने चित्त को स्वच्छ तथा शरीर को स्वस्थ बनाने के लिये किस प्रकार से यौगिक आहार करना चाहिये ? इसका वर्णन श्रीमद्भगवद्गीता के छठवें अध्याय में कुछ इस प्रकार हुआ है¹⁶। योगी को न तो अधिक खाना चाहिये और न ही अन्न का सर्वथा त्याग करके पूरा ही उपवास रखना चाहिये। अधिक खाने से नींद एवं आलस्य बढ़ जाते हैं। साथ ही पचाने की शक्ति की तुलना में पेट में पहुँचा हुआ अधिक अन्न विभिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न करता है। आहार न करने से इन्द्रियाँ, प्राण और मन की शक्ति का क्षय हो जाता है। जिसके परिणामस्वरूप आसन पर स्थिर रूप से न तो बैठा जाता है और न ही परमेश्वर के चिन्तन में मन एकाग्र हो पाता है। इसके अतिरिक्त योगी के लिये जो युक्ताहारविहारस्य¹⁷ की बात कही गई है अर्थात् खाने पीने की वस्तुएँ सात्विक हों, राजसिक और तमोगुण को बढ़ाने वाली न हों, पवित्र हों, इसी प्रकार घूमना फिरना भी उतना ही चाहिये जितना स्वास्थ्य के लिये हितकर हो। नियमित और उचित आहार-विहार से शरीर इन्द्रियाँ और मन में सत्त्वगुण बढ़ता है तथा उससे निर्मलता, प्रसन्नता और चेतना की अभिवृद्धि होती है।

स्वच्छता एवं भोजन ग्रहण करने की विधि -

जहाँ हम भोजन करते हैं वहाँ का स्थान, वायुमण्डल, आसन भी पवित्र होना चाहिये। कारण कि भोजन करते समय प्राण जब अन्न ग्रहण करते हैं तब वे शरीर के सभी रोमकूपों से आस-पास के परमाणुओं को भी खींचते हैं अतः वहाँ का स्थान, वायुमण्डल आदि जैसे होंगे प्राण वैसे ही परमाणु खींचेंगे तथा उन्हीं के अनुसार मन होगा।

भोजन के पूर्व दोनों हाथ, दोनों पैर और मुख ये पाँचों शुद्ध पवित्र जल से धो लें। पूर्व या उत्तर की ओर मुख करके शुद्ध आसन पर बैठकर भोजन की सभी वस्तुओं को रखकर यह श्लोक पढ़कर भगवान् को अर्पण करने का वर्णन गीता में किया गया है-

पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।

तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः॥¹⁸

अर्थात् पत्र पुष्प फल और जल का नाम लेकर अर्पण करने से यहाँ तात्पर्य है कि जो वस्तु असाधारण मनुष्य को बिना परिश्रम, हिंसा और व्यय के अनायास ही मिल जाती है, ऐसी कोई भी वस्तु भगवान् को अर्पण की जा सकती है। क्योंकि भगवान् को किसी वस्तु की नहीं अपितु प्रेमभाव की आवश्यकता होती है। भोजन आरम्भ करने से पूर्व ऐसा करने से आहार का प्रभाव औषधीरूप हो जाता है।

अर्पण करने वाले का भाव शुद्ध होना चाहिये। यदि भाव शुद्ध नहीं है और बाहर से शिष्टाचार के साथ मनुष्य उत्तम से उत्तम सामग्री अर्पण करे उसे भगवान् स्वीकार नहीं करते। अर्पण के पश्चात् दायें हाथ में जल लेकर ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम्। ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना॥¹⁹ यह श्लोक पढ़कर आचमन करना चाहिये। भोजन का पहला ग्रास भगवान् का नाम लेकर ही मुख में डालें। इसके साथ यदि हम प्रत्येक ग्रास को चबाते हुये 'हरे राम हरे राम राम राम हरे, हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण हरे हरे' इस मन्त्र को मन से दो बार पढ़ते हुये या अपने इष्ट का नाम लें और उसे निगले। इस मन्त्र में सोलह नाम हैं और दो बार मन्त्र पढ़ने से बत्तीस नाम हो जाते हैं। हमारे मुख में भी कुल बत्तीस दाँत ही हैं। अतः (मन्त्र में प्रत्येक नाम के साथ) बत्तीस बार चबाने से यह भोजन सुपाच्य और आरोग्यदायक होगा तथा थोड़े अन्न से ही तृप्ति भी हो जायेगी। हमारा भोजन भी भजन बन जायेगा।²⁰

वैज्ञानिकों एवं चिकित्सकों द्वारा भी यह तथ्य प्रस्तुत किया गया है कि जब हम भोजन को अच्छे प्रकार से चबाते हैं तब हमारे शरीर की सभी नसें क्रियाशील हो जाती हैं। हमारी पाचन क्रिया मुख से ही प्रारम्भ होती है। मुख में जो लार (Saliva) बनती है उसमें जो किण्वक (Enzyme) होते हैं वह पाचन क्रिया में सहायता करते हैं। अतः भोजन के प्रत्येक ग्रास को अच्छी तरह चबाकर खाना चाहिये। चबाने से भोजन अच्छी तरह पचता है। यदि भोजन अच्छी तरह नहीं पचेगा तो भिन्न-भिन्न प्रकार के उदर सम्बन्धी रोग उत्पन्न होने की सम्भावना होती है। भोजन के पाचन के लिये 'अहं वैश्वानरो भूत्वा' का पाठ करते हुए मध्यमा अंगुली से नाभि को धीरे-धीरे घुमाना चाहिये।²¹

भोजन करने के उपरान्त अंगुली से नाभि को घुमाना चिकित्सीय पद्धति में "Peristalsis movement" कहते हैं। इससे भोजन ऊपर से नीचे होता है और किसी प्रकार से जी नहीं मचलता।

भोजन का भाव से सम्बन्ध -

भोजन करने वाले तथा कराने वाले के भाव का प्रभाव भी भोजन पर पड़ता है। इस तथ्य को आधुनिक चिकित्साशास्त्र भी स्वीकार करता है। भोजन के साथ-साथ, खिलाने वाले का भी महत्व होता है। इसीलिये भोजन किस भावना से बनाया गया है? किस भाव एवं दुलार से खिलाया गया है? किस मनोभाव से ग्रहण किया गया है? आदि बातों का सीधा प्रभाव मन पर पड़ता है।

गीता में सैद्धान्तिक रूप से कहा गया है कि सर्वभूतहितेस्ताः।²² तात्पर्य यह है कि जिसमें सम्पूर्ण प्राणियों के हित का भाव जितना अधिक होगा उसकी पदार्थ क्रिया आदि उतनी ही पवित्र हो जायेंगी। अतः सम्पूर्ण शोधपत्र का सार यह है कि समस्त साधनाओं की प्राथमिकी आवश्यकता सात्त्विक आहार है। यदि मनुष्य अपने जीवन में प्रसन्नता और सन्तोष की मनःस्थिति को चाहता है तो उसे सामान्य भोजन करना चाहिये। जिसका प्रभाव शरीर की आरोग्य वृद्धि के लिये ही नहीं अपितु मन की सात्त्विकता बढ़ाने की दृष्टि में भी अत्यन्त सहायक होता है। अतः इन सभी के लिये हमें भोजन के सन्दर्भ में श्रीमद्भगवद्गीता में प्रतिबिम्बित सात्त्विक सिद्धान्तों का पालन करना चाहिये। जिसकी प्राथमिकता को आज के वैज्ञानिक एवं चिकित्सक भी स्वीकार करते हैं। यद्यपि श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने प्रत्यक्ष रूप से सात्त्विक भोज्य पदार्थों का उल्लेख नहीं किया है किन्तु सात्त्विक आहारी के प्रिय भोजन की प्रकृति एवं उसका प्रतिफल बताकर, सात्त्विक आहार को सांकेतिक रूप से समझाया है। यह स्वास्थ्य संरक्षण के विषय में अत्यन्त उपादेय है।

-
- 1 चरकसंहिता
 - 2 छान्दोग्योपनिषद्, 6/5/4
 - 3 छान्दोग्योपनिषद्, 2/26/2
 - 4 श्रीमद्भगवद्गीता/17/3
 - 5 श्रीमद्भगवद्गीता/4/30
 - 6 श्रीमद्भगवद्गीता 6/16
 - 7 श्रीमद्भगवद्गीता 6/17
 - 8 श्रीमद्भगवद्गीता/9/27
 - 9 श्रीमद्भगवद्गीता/18/52
 - 10 चरकसंहिता 28/45
 - 11 श्रीमद्भगवद्गीता/17/7
 - 12 श्रीमद्भगवद्गीता/14/17
 - 13 श्रीमद्भगवद्गीता/17/8
 - 14 श्रीमद्भगवद्गीता/17/9
 - 15 श्रीमद्भगवद्गीता/17/10
 - 16 श्रीमद्भगवद्गीता/6/16
 - 17 श्रीमद्भगवद्गीता/6/17
 - 18 श्रीमद्भगवद्गीता/9/26
 - 19 श्रीमद्भगवद्गीता/4/24
 - 20 श्रीमद्भगवद्गीता साधक संजीवनी पृ० 1050 पर उद्धृत
 - 21 श्रीमद्भगवद्गीता साधक संजीवनी पृ० 1051 पर उद्धृत
 - 22 श्रीमद्भगवद्गीता/5/25, 12/4